अष्टावक्र गीता का सारांश (Summary)

'अष्टावक्र गीता' का यह सारांश मुख्यतः इसी ग्रन्थ की निम्नलिखित दो व्याख्याओं पर आधारित है -

[1] "अष्टावक्र गीता", व्याख्याकार - स्वामी प्रखर प्रज्ञानंद, विद्या विहार, नई दिल्ली, 2018

[2] "अष्टावक्र गीता", अनुवादक एवं व्याख्याकार - श्री नन्द लाल दशोरा, रणधीर प्रकाशन, हरिद्वार, 2008

- जैसा कि "अष्टावक्र गीता का परिचय" में बताया गया है, विद्वानों की एक सभा में बारह-वर्षीय बालक अष्टावक्र जी के ज्ञान से प्रभावित होकर राजा जनक ने उन्हें अपने महल में आमंत्रित किया। महल में अष्टावक्र जी को सिंहासन पर बैठाया। स्वयं उनके चरणों में बैठकर शिष्य-भाव से अपनी जिज्ञासाओं का समाधान कराया। यही शंका-समाधान अष्टावक्र-जनक संवाद रूप में 'अष्टावक्र गीता' है।
- जहाँ भगवद् गीता में कुल 18 अध्याय (chapters) हैं और उनमें कुल 700 श्लोक हैं, वहीं अष्टावक्र गीता में कुल 20 प्रकरण (episodes, घटनाएं या उपकथाएं) हैं और उनमें कुल लगभग 300 श्लोक (सूत्र) हैं।
- उदाहरण के लिए प्रारम्भ के 4 प्रकरणों के नाम, सूत्रों की संख्या के साथ, नीचे दिए जा रहे हैं –
  - **प्रथम प्रकरण** - राजा जनक की ज्ञान, वैराग्य और मुक्ति की जिज्ञासा करना (1 सूत्र), अष्टावक्र जी का उत्तर (19 सूत्र)
  - **दूसरा प्रकरण** - राजा जनक को आत्म-ज्ञान की उपलब्धि (25 सूत्र)
  - **तीसरा प्रकरण** - अष्टावक्र जी द्वारा राजा जनक की आत्म-ज्ञान की परीक्षा (प्रश्न) (14 सूत्र)
  - **चौथा प्रकरण** - राजा जनक का उत्तर (6 सूत्र)

- **अष्टावक्र जी का उपदेश इतना सार-गर्भित है कि उसे सुनते-सुनते ही राजा जनक को आत्म-बोध हो गया, उन्हें अपने स्वरूप (real self) का ज्ञान हो गया।**[1]
- केवल प्रथम प्रकरण के पहले चार सूत्र अर्थ-सहित नीचे दिए जा रहे हैं, जो राजा जनक की संशाओं और अष्टावक्र जी के द्वारा उन संशाओं के समाधान का प्रवाह अष्टावक्र गीता में निर्धारित करते हैं।

- अष्टावक्र गीता का प्रारम्भ राजा जनक द्वारा अष्टावक्र जी से पूछे गए तीन प्रश्नों से होता है –

जनक उवाच -

कथं ज्ञानमवाप्नोति कथं मुक्तिर्भविष्यति । वैराग्य च कथं प्राप्तमेतद ब्रूहि मम प्रभो ॥१-१॥

अर्थात - "हे प्रभु! ज्ञान की प्राप्ति कैसे होती है? मुक्ति कैसे प्राप्त होती है? वैराग्य कैसे प्राप्त किया जाता है? ये सब मुझे बताएं।" **(अष्टावक्र गीता - 1.1)**

- राजा जनक के उपरोक्त तीन प्रश्नों के उत्तर में अष्टावक्र जी ने सबसे पहले मुक्ति के लिए वैराग्य की परम-आवश्यकता बताई।[1] अष्टावक्र जी राजा जनक से कहते हैं –

अष्टावक्र उवाच -

मुक्तिमिच्छसि चेत्तात् विषयान विषवत्त्यज । क्षमार्जवदयातोष सत्यं पीयूषवद्भज ॥१-२॥

अर्थात - "यदि तू मुक्ति चाहता है तो अपने मन से विषयों (वस्तुओं के उपभोग की इच्छा) को विष की तरह त्याग दे (अर्थात, मुक्ति पाने के लिए सबसे पहले विषयों से वैराग्य ले), और क्षमा, सरलता, दया, संतोष तथा सत्य का अमृत की तरह सेवन कर।" **(अष्टावक्र गीता - 1.2)**

- अब अष्टावक्र जी राजा जनक को उनके अपने स्वरूप का बोध (आत्म-बोध) कराते हैं [2] –

  न पृथ्वी न जलं नाग्निर्न वायुर्द्यौर्न वा भवान् । एषां साक्षिणमात्मानं चिद्रूपं विद्धि मुक्तये ॥१-३॥

  अर्थात - "तू न पृथ्वी है, न जल, न अग्नि, न वायु, न आकाश ही है। मुक्ति के लिए अपने को इन सबका साक्षी चैतन्यरूप जान (अर्थात, तू पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश, इन पाँच तत्त्वों से बना शरीर नहीं है, अपितु तू केवल चैतन्य-रूप साक्षी है - यही वास्तविक ज्ञान है, यही आत्म-ज्ञान है)।" **(अष्टावक्र गीता - 1.3)**

- अगले सूत्र में अष्टावक्र जी ने बताया कि वैराग्य और आत्म-ज्ञान प्राप्त कर लेने से ही मुक्ति नहीं मिलेगी, अपितु इन दोनों की प्राप्ति के उपरान्त चैतन्य में विश्राम कर स्थित रहने पर ही संसार के बंधन से मुक्ति होगी।[2] वे कहते हैं -

  यदि देहं पृथक् कृत्य चिति विश्राम्य तिष्ठसि । अधुनैव सुखी शान्तो बन्धमुक्तो भविष्यसि ॥१-४॥

  अर्थात - "यदि तू स्वयं को इस शरीर से अलग करके, चेतना में विश्राम करे तो तत्काल ही सुख, शांति और बंधन-मुक्त अवस्था को प्राप्त होगा।" **(अष्टावक्र गीता - 1.4)**